International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 12
September 2017

महिला उपन्यासकार (कृष्ण सोवती, प्रभा खेतान, चित्रा मुद्गल, अनामिका) और नारी विमर्श

पायलदीप

सहायक प्राध्यापक हिन्दी विभाग

महाविद्यालयः गुरु नानक कालेज फॉर गर्लज, श्री मुक्तसर साहिब

वर्तमान शताब्दी नारी अस्मिता, नारी अस्तित्व, नारी चेतना, सशक्तीकरण और नारी विमश के नाम है। जब से ही नारी के सशक्तीकरण का वर्ष मनाया जाना आरम्भ किया तभी से नारी, महिला, स्त्री शब्द मुददों के सागर की अतल गहराई से धरातल पर उभर कर सामने आए है। यह अपनी अर्थवता में कितना भी गहरा हो परन्तु आज सभी सामाजिक कार्यकर्ताओं मीडिया, विज्ञापन सतओं उद्यामियों फिल्म अर्थात विश्व स्तर पर सम्पूर्ण जगत में उथल-पुथल मचा देने वाला सिद्व हुआ है। आज प्रत्येक व्यक्ति अपने ढंग से सोचकर नारी उत्थान की बात करता है। साहित्य का ज्वलन्त मुददा नारी अस्मिता ही है। प्राचीन काल से अर्थात सदियों से शोषित, दलित, पितृ सतात्मक समाज में पीछे की गई नारी को केन्द्र में रखकर अनेक लेखक-लेखिकाएँ संघर्षरत है। प्रत्येक दिशा में नारी पुकार है, उसी की गुहार है। नारी उत्थान और नारी की अस्मिता के संकट को दूर करने के लिए केवल नारी सेवी संस्थाओं की जिम्मेदारी ही नही है, अपितु नारी में स्वंय ऐसी सजगता एंव क्रियाशीलता पनप रही है क्योंकि जितना समय नारी स्वंय अपनी सुरक्षा व अधिकारों के प्रति सजग, सुचेत और समझदारी का प्रयोग नही करेगी, उतना समय वह समाज में अपना उच्चतम अस्तित्व प्राप्त नहीं कर पाएगी। इसी लिए नारी में स्वंय सुचेतना सजगता उत्पन्न हो रही है। भारतीय समाज में नारी अस्मिता की खोज करने की दृष्टि के लिए समाज और साहित्य दोनों के लिए केवल साहित्य ही नहीं अपितु सामाजित और सांस्कृतिक स्थिति का योगदान भी रहता है। किसी एक को लेकर नारी अस्तित्व को पहचानने की कोशिश प्रायः अर्पूण, असफल

होती है। इक्कीसवीं शताब्दी में नारी विमर्श एव स्वतंत्र विकसित विमर्श के रुप में पहचाना जा रहा है।

(नारी + विमर्श) एक ऐसा विमर्श है जो नारी सम्बन्धी समस्त चर्चाओं को लेकर चलता है। पुरुष प्रधान समाज में नारी की हैसियत, अधिकार, अस्मिता, अस्तित्व को लेकर कुछ ऐसे प्रश्न है। जिनका उतर नारी विमर्श में ढूंढने का प्रयास किया जा रहा है।

नारी विमर्श का अर्थ है - मानव मुक्ति। मानव मुक्ति में लिंग और वर्ग का भेद नही रहता। वास्तव में जहाँ नारी में 'स्व' के प्रति सावधानी, 'में' के प्रति चिन्ताभाव और अपने अधिकार का अहसास है, समझना चाहिए वही से नारी विमर्श का सूत्रपात है। नारी विमर्श का प्रधान प्रयोजन जनतंत्र के साथ-साथ पारिवारिक प्रजातंत्र की स्थापना है। जब तक नारी जाति को समान अधिकारों की प्राप्ति ही नही होंगी, तब तक सामाजिक और राजनीतिक लोकतंत्र तथा देश की स्वाधीनता की बातें हवा में महल उसारने वाली बात ही होंगी।

हिन्दी साहित्य में नारी का चित्रण आदिकाल से होता आया है। नारी विमर्श की परम्परा से होता आया है। नारी विमर्श की परम्परा को स्पष्ट करते हुए लिखा भी गया है - "भारतीय साहित्य में नारी विमर्श का प्रथम दस्तावेज वासायन का 'काम सूत्र' तथा बोद्व कालीन 'थेरीगाथा' रही है क्योंकि वही स्त्री की स्वंवत्रता दिखाई देती है।" पितृसतात्मक समाज में अपनी श्रेष्ठता स्थापित करने के लिए स्नीत्व की जो परिभाषा सौंपी गई है, उसमें केवल रुढि की घेरेबंदी नहीं है, अमानवीयता और असमानता के ऐसे अंधवियवासी अनुशासन भी दिखाई देते है कि एक क्षण के लिए मन आक्रांन्त हो उठता है। "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता" की धरती पर शक्तिस्वरुपा प्रतिष्ठित की गई नारी की अस्तित्वगत सामाजिक वास्तविकता आखिर है क्या? कौन सी ऐसी परिभाषा है। कौन सी ऐसी छवि है, जो नारी की अस्मिता में अपनी पहचान है? परम्परा में ढली नारी के मस्तिष्क में अपने आपकों पचहाने का क्रम उसका संघर्ष बना। यथास्थिति ही उसकी निर्थात है और उसने स्वीकार भी किया। यही स्वीकृति उसने अपनी संतान अथवा अपने भविष्य की नारी को विरासत के रुप में दी। खंटे से बधी हुई गाय में और उसमें अंतर है, उसने

कभी नही सोचा, उसके हिस्से का आकाश छोटा क्यो है? सूर्य की रोशनी उसके लिए सीमित कयों है? स्वतंत्रता उसके लिए वर्जित क्यों है? उसने कभी नही सोचा।

तीसवीं शताब्दी के आरंभ ने उसे उसके हिस्से का आकाश दिया - शिक्षा और जागरुकता के माध्यम से जागरुकता से उसके भीतर दर्द उपजा, इस से उसकी सोच उपजी, सोज से चेतना उपजी और फिर चेतना से अभिव्यक्ति मिली, जो आगे चलकर उसके अस्तित्व को लेकर महा सफल सिद्व हुई।

अपनी रचनाओं में नारी विमर्श को एक सशक्त और नवीन मोड देने वालों में कृष्णा पेबती का नाम अत्यन्त महत्वपूर्ण है। कृष्ण पेबती एक ऐसा नाम है, जो साठ के दशक से लेकर इक्कीसवीं सदी के आरम्भ तक एक लंबे कालखण्ड को समेटे हुए है। कृष्णा की रचनाएँ नारी चेतना की विकास यात्रा को प्रस्ततु करती है। कृष्ण के उयन्यास 'डर से बिछडी से लेकर 'समय सरगम' तक की यात्रा इसी का प्रमाण है।

उपन्यास (1958) ई. में डार से बिछडी की पाशों यात्रा उस समाज में रहती है जहाँ एक बार थिरका पाँच जिंदगानी धूल में मिला देगा। उसके लिए मामा-मामी की प्रताडना सहने के अतिरिक्त कोई विकल्प नही परन्तु वह घर से भागकर एक साहसिक प्रयास तो अवश्य करती है जो नारी चेतना के उदय का आरम्भ माना जा सकता है। 'डार से बिछुडी' आदि से अन्त तक पाशों की करुण गाथा है। कृष्ण सेबती ने पाशो के माध्यम से पारिवारिक परिवंश में नारी हदय की मनः स्थितियों व भावनओं का कुछ हद तक मनोवैज्ञानिक वित्रण किया है।

कृष्ण सोबती का उपन्यास **मित्रो मरजानी** जो 1966 ई. प्रकाशित हुआ, अत्यन्त चर्चित और विवादास्पद उपन्यास है। इस उपन्यास की नायिका मित्रों पारम्परिक मूल्यों, मयदिाओं की पुरानी नीवों को तोड़ती, शहतीरों को तोड़ती एक दम अलग और अनोखे पात्रों में अववरित होती है। उसका आचरण समाज के चौखटे में न समाकर एक भिन्न नैतिक मूल्यांकन की अपेक्ष रखता है। पंजाब के प्राचीन संयुक्त परिवार की मंझली बहु और सरदारी लाल की पत्नी अपने पति के ठण्डे आचरण से परेशान मित्रों अपनी शरीरिक जरुरतों को खुले शब्दों में व्यक्त करती, सास-ससुर तथा

परिवार के अन्य सदस्यों को चुनौंती देती विद्रोह का स्वर बुलंद करती है कि अगर वह माँ नही बन सकी तो इस में उसका नहीं, उसके पति का दोष है।

त्याग, समपूर्ण, शील, संकोच, सतीत्व और मातृत्व की छवि से अलंकृत भारतीय नारी के बीच मित्रों का यह अनपंक्षित रुप अचानक विस्फोट करता हुआ सम्पूर्ण नारी संसार को भले ही लज्जा जाता है पर एक बात हमारा ध्यान आकर्षित करती है कि भारतीय नारी के लिए मित्रों अपवाद ही सही पर एक अर्थ में नारी अस्मिता औरनारी चेतना के आरम्भ का प्रस्ताव बिंदु कही जा सकती है।

तीन पहाड (1968) उपन्यास के माध्यम से कृष्ण सोबती जी ने नारी के प्रेम में विफल होने पर उसकी आँसुओं से भरी स्थिति का उल्लेख किया है। प्रेम-त्रिकोण के माध्यम से स्नेहमयी नारी की स्थिति को दशयिा है। नायिका 'जया' की मन स्थिति को प्रकट किया है जो प्रेम में असफल होने के कारण और अवसाद से भरी है।

1972 में प्रकाशित सोबती जी का उपन्यास 'सूरजमूखी' अंधेरे के नारी सम्बन्धी चर्चित उपन्यास है। इस में नारी जीवन की एक मनोवैज्ञानिक समस्या को उभारा गया है। 'रति' बचपन में बलात्कार का शिकार होती है। इसका मनोवैज्ञानिक असर होता है। वह आसहिष्णु, कूर और फ्रिजिड हो जाती है। अंत में दिवाकर के सम्पर्क में आकर उसे पूर्ण समर्पण कर देती है। उसे कामविकृति से मुक्ति मिल जाती है। उसे इस बात का अहसास होता है कि उसे पुरुष से केवल शारीरिक नही अपितु मानसिक तृप्ति भी चाहिए। इस में परम्परा से हटकर साहसिक कदम उठाया है।

कृष्ण सोबती का साहित्य अकादमी द्वारा पुरस्कृत '**जिदगीनामा**' (1979 ई.) की नारियाँ चाची महरी, राबयाँ, फतेह भी अपने जीवन का रास्ता स्वंय चुनती है।

ऐ लडकी उपन्यास सोबती जी की नारी केन्द्रित यह माँ-बेटी के बीच हुए हार्दिक संवादों का ही कच्चा चिट्ठा नही बल्कि समग्र नारी-जीवन पर केन्द्रित उपन्यास है। नारी के बदलते दृष्टिकोण हुई को लेकर कृष्ण जी एक खास बौद्विक तेवर के साथ उपस्थित हुई है जहां रोमंटिक भावुक दुष्टि को नकार कर वैचारिकता के धरातल पर नारी जीवन को प्रस्तुत किया है। इस उपन्यास की प्रमुख

की पात्र अम्मू की बातों में नारी जीवन के उत्थान हेतु अत्यन्त सारगर्भित संदेश है "उसका वक्त तब सुधरेगा जब वह अपनी जीविका स्वंय कमाने लगेगी।" अंतिम समय में अम्मू की पुकार हर नारी की पुकार बन जाती है, "तितली नही माँग रही, अपना माँग रही हूँ। मुझे दे दो! तजी हवा में साँस लेने दो।

दिलोदानिश के स्त्री पात्र, कुटुम्ब प्यारी आयामों को छुन्ना भी नारी चेतना के विकास के विविध आयामों को पस्तुत करते हुए पितृसतात्मक व्यवस्थ की परते उघाड़ते है। नारी चरित्र के विकास के रुप में परिणति समय-सरगाम उपन्यास की आरण्या से मुक्त, निर्णय लेने में स्वतंत्र, गलत का प्रतिरोध करने में सक्षम, असुरक्षा के भाव से परे दृढ आत्मविश्वास से लबालब नारी के रुप में उभरी है। पाशों से लेकर आरण्या तक सोबती जी नारी चेतना के क्रमिक विकास को अत्यन्त सफलतापूर्वक करती है।

प्रभा खेतान जी ने नारी विमर्श से सम्बिन्धत अपने अनेक विचार दृढता से प्रदान किए है। अपने विचारों में इन्होने बदलती वैश्विक परिस्थितियों के अन्तर्गत नारी की स्थिति का आकलन करते हुए उसे एक निर्दिष्ट दिशा देने का प्रयास किया है। अपने उपन्यास पीली आँधी तथा छिन्नतस्ता में कलक्ता के मारखाडी समुदाय की नारी स्थिति एवं निर्थात को उजागर करती है, जिसकी भोक्ता वह स्वंय रही है।

पीली आँधी (1996) उपन्यास प्रभा खेतान की महत्वपूर्ण कृतिथों में से एक है। नारी सम्बन्धी समस्याओं यथा परिवार में नारी की स्थिति, स्त्री-पुरुष सम्बन्ध, प्रेम एंव विवाह, तलाक और पुरुष र्वस्व के विरोध में नारी का स्वतंत्र अस्तित्व एंव उसका अवदान आदि की दृष्टि से इस कृति का महत्वपूर्ण योगदान है। इस उपन्यास के अर्न्तत नारी पात्र सोमा, राधा बाई, पदमवती मारवाडी समाज की परम्पराओं, मयदिाओं से बंधी नारियाँ जो अपनी जीवन का निर्णय स्वयं नहीं हो सकती। सोमा यह प्रयत्न करती है परन्तु वह आत्म-विश्वासी पात्रा नहीं है वह कहती है कि तुम कुछ भी नहीं सोमा बस झाग हो मिहकशेक के गिलास में तैरने वाला झाग।

नारी के अधिकार से प्रभा खेतान का तात्पर्य एक स्वतंत्र अस्तित्व वाले प्राणी के रुप में नारी की इयता का त्याग कर निम्नवर्गीय अध्यापक के साथ अपनी जिंदगी व्यक्ति करना स्वीकार

करती है, क्योंकि वह उस को अच्छी तरह सोमा ने सम्पति लेने से इन्कार कर व्यक्तिगत स्वतंत्रता को प्राप्त कर चुकी नारी की चारित्रिक दृढता और उदारता को स्पष्ट किया है।

छित्रमस्ता (1943) उपन्यास चाहे पीली आँधी से पलहे की रचना है, परन्तु पीली आँधी में प्रभा खेतान ने नारी स्थिति को केवल उदघटित किया। मुक्ति का पथ नहीं खोजा वही छित्रमस्ता में स्त्रीपति, परिवार और बच्चों के बिना जीवन देखने अर्थात व्यतीत करने में समर्थ है, अपने व्यक्तित्व को लेकर सजग है। यह नारी की अपनी निर्थात से संघर्स व अपने 'स्व' के निर्माण की कथा है।

छित्रमस्ता उपन्यास की पात्रा प्रिया के दो घर है। एक माँ का और दूसरा ससुराल का। ससुराल की स्थिति ऐसी है कि परिवार में चार प्राणी होते हुए चारों की अलग-2 दिशाएँ है। ससुर का दूसरा परिवार होने के कारण परिवारिक तनाव उत्पन्न होता है।

प्रिया परम्परागत विवाह के बोझ को वहन करती हुई अंतः एक कठिन फैसला लेती है कि एक सुखी वैवाहिक जीवन से अच्छा कुछ नहीं, मगर कितने लोगों को यह नसीब होता है? फिर मरे हुए सम्बन्धों को ढोने की क्या जरुरत? पति यहाँ तक कि बेटे का भी प्रेम भंग करके वह अपना स्वतंत्र रास्ता ग्रहण करती है। एक प्रौढ़ मुकाम पर पहुँचने के बाद वह पाती है कि "अड़तालीस वर्ष की आयु में पूरी की पूरी साबुत औंरत हुँ जो जीवन को झेल नहीं रही बल्कि हँसते हुए व्यतीत कर रही हुँ।" आत्म विश्वासी प्रिया अपने एकांक एंव ठहरे पलों में दन्द्व ग्रस्त हो जाती है और दो सदियों के मिलान बिंदु पर खड़ी नारी की दुविधा को साकार करती है।

'आओं पेपे घर चले' (1990) उपन्यास में प्रभा खेतान जी ने अमेरिका के तीन शहरों लास एंजेल्स, सेंट लुइस और न्यूयार्क में रहते हुए अपने अनुभवों के आधार पर अमेरिकी नारी जीवन की अन्तर्व्यथा का उदघाटन किया है। इस में आईलिन, मिसेज डी, कलारा ब्राउन, मरील, मिसेज हैल्गा बेरी, कैथी आदि अनेक नारी पात्र है। सथी आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न और आत्मनिर्भर है, किन्तु सभी अपने सीने में दर्द का दंश दबाए हुए है। सभी पुरुषों की स्वार्थपरता और निष्ठुरता का शिकार है।

आईलिन का अनुभव है "माई डियर! औंरत कहाँ नहीं रोती और कब नही रोती। वह जितना ही रोती है, उतनी ही औंरत होती जाती है।" अमेरिका की तेज व्यवसापिक जिंदगी ने मानवीय संवेदना का श्रय किया है। वहाँ के जानवरों में कही अधिक मानवीयता है। आइलिन का कुता 'पे-पे' उसकी समाधि पर आँसू बहाता है, लेखिका उस से पुत्र जैसा अपनत्व अनुभव करती है। उपन्यास की अन्तिम पंक्तियों में उसे याद करती हुई कहती है पे पे क्या तुम्हारे गले में मेरा कढ़ाई वाला कालर अब भी बंधा है। उपन्यास का नाम 'आओं पे पे घर चले' उसे केन्द्रीय पात्र की भूमिका प्रदान करता है। अमेरिका जैसे समृद्व देश की नारी की पीडा का उदघाटन करके प्रभा जी का यह उपन्यास विशिष्ट और महत्वपूर्ण है।

चित्रा मुदगल ने जगत में होने वाले नारी शोषण को सार्थक औपन्यासिक परिणति देकर एक सफल उपन्यास लेखिका के रुप में अपने आप को स्थापित किया है। **एक जमीन अपनी** (1990 ई.) में अंकिता प्राचीन रुढियों और सामाजिक बंधनों से मुक्त होकर, जमीन पर दृढता से पाँव जमाती, आत्म विश्वास अर्जित करती नयी स्त्री के रुप में अवतरित होती है। वह पुरुष धरातल को ठुकराकर अपनी जमीन की तलाश करती है और सफल होती है। परन्तु यह सफलता आसानी से नहीं मिलती क्योंकि समाज अभी स्वतंत्र की उनस्थिति का आदी नही, घर से बाहर हुई स्त्री को कुछ भी अनुभव करने का अधिकार नही होता... उस पर प्रत्येक व्यक्ति ढेला तान सकता है।" परन्तु फिर भी अंकिता आत्म सम्मान खोये बिना सफलता प्राप्त करती है। अंकिता का संघर्ष स्वकेन्द्रित न होकर समाजपरक है। वह किसी भी नारी की अवमानना बर्दाशत नही करती। उसके समानांतर उसकी सखी नीता है जो बाहरी स्वतंत्रता या कहे उन्मुक्ता को ही अपना लक्ष्य मानती है, जहाँ वर्जनओं को ठुकराकर मूल्यहीनता से भरी तथा कथित आधुनिक जीवन शैली को ही सत्य माना जाता है परन्तु अंत में वह टूट जाती है और आत्महत्या कर लेती है। यहाँ वस्तुत चित्रा मुद्गल ने पश्चिमी विचारधारा से प्रभावित तथाकथित नारीवाद के खोखले स्वरुप पर प्रकाश डाला है। तथा अंकिता के माध्यम से नारी-मुक्ति के वास्तविक स्वरुप को उद्घाटित किया है कि नारी पुरुष बनकर समाज में समानता चाहती है। नारी बने रहकर क्यों नहीं? नारीत्व के गुणों को

बरकरार रखते हुए। स्त्री को स्त्रीत्व से मुक्ति नही चाहिए। उन रुढ़ियों से मुक्ति चाहिए, जिन्होंने उसे वस्तु बना रखा है।

चित्रा मुद्गल का दूसरा उपन्यास 'आवां' एक चर्चित उपन्यास है, जिसमें एक ओर नमिता जैसी मूल्यों से जुड़ी आर्दशवादी लड़कियाँ है, तो दूसरी ओर स्मिता जैसी बोल्ड लडकियाँ जो पुरुष से बदला लेने के लिए किसी भी सीमा तक जा सकती है। इन्ही दो विपरीत ध्रवुों के बीव चित्रा जी की नारी चेतना का निर्माण होता है। आवां की नमिता देश की उन बहु-संरयक नारियों का प्रतिनिधित्व करती है, जिन्हो अपने जीवन और अस्तित्व की रक्षा के लिए पल-पल जूझना पड़ता है। वह ऐसी उपभोक्तावादी शक्तियों से जूझती है जो अस्तित्व को बचाए रखने की कीमत अस्मिता को रौंद कर वसूल करती है परंतु वह अपने स्वत्व को बचा लेती है। जीवन की आवश्यकताएं उससे उसके मूल्य नही छीन पाती। हालांकि वह संजय कनोई के जाल में फंसकर स्वयं को समर्पित कर देती है। पर संजय कनोई उपभोक्तावाद की उस मुलभूत पद्धति का प्रतीक है जो शोषित का शोषण उसीकी मर्जी से इस प्रकार करता है कि शोषित को अपने शोषण का पता ही नही चलता। सत्य का पता चलते ही वह सब कुछ ठुकरा कर चल देती है और कहती है कि ''अपना हक अपने पसीने से मिलता है। पसीना चाहे श्रम का हो या संघर्स का प्रतिवाद का हो या आक्रोश का। उदास मौसम के खिलाफ जो अपने से लड़ सकता है वही उपसे लड़ सकता है, जिन्होने उजाले पर कालिख पोतने के लिए अपने हाथों को काला कर लिया है।''

स्मिता आवां की ऐसी पात्र है जो पिता के अत्याचारों के विरोध में पुरुषमात्र की विरोधी बन जाती है। वह स्वयं को पारिभाषित करते हुए कहती है, ''मुझे लगता है वैज्ञानिक शोध के अंतसत्यों से परे मुझ में आज की औरत के जीन है जो अब तक जन्मी नहीं थी..... जन्मने को छटपटा रही थी।'' गौतमी भी आर्थिक रुप से स्वालम्बन ग्राहण करने के बाद पति तक को अनावश्यक छूट नहीं देती बल्कि पति उसके लिए वस्तु बन कर रह जाता है। इन सबके साथ नीलम्मा, किशोरी बाई व सुनंदा जैसी स्वाभिमानी और साधारण नारियाँ हैं जो चित्रा जी की नारी चेतना को निर्मित करती है। सुनंदा ऐसी चेतना का प्रतीक है जो आत्मविश्वास से पूर्ण है और स्वीकार करती है कि ''मेरा मातृत्व ब्याह के टुच्चे प्रमाण पत्र का मोहताज नहीं।''

नारी विमर्श की अगली कड़ी के रुप में चर्चित कवयित्री अनामिका का नाम आता है। मूलतः कविता से जुड़े होने पर भी अनामिका के दो उपन्यास 'तिनका तिनके पास' तथा 'दस द्वारे का पिंजरा' नारी विमर्श का अत्यन्त परिपम्व रुप प्रस्तुत करते है। 'तिनका तिनके पास' की मुख्य पात्रा 'तारा' अनामिका जी की नारी चेतना की प्रतिनिधि मानी जा सकती है। तारा के सम्बन्ध में एक अन्य पात्र अवंतिका देवी कहती है, ''तारा में मैं'' वाला प्रतिशोधमूलक सस्ता प्रतिकार नहीं था- धैर्यवान, प्रज्ञापरक, अहिंसक, प्रतिकार, एक स्पष्ट रणनीति- अब लौं नसानी, अब न नसौहों। अनामिका जी ने अपने दोनों उपन्यासों में वेश्या जीवन पर कलम चलाई है। वेश्यावृति का जीवन व्यतीत करने पर भी उसकी नारी अपराध बोध से मुक्त है। यह एक ऐसा विषय है जिस पर अब तक विशेषतः महिला लेखकों द्वारा बहुत कम लिखा गया है, परन्तु अनामिका जी ने इस पेशे से जुड़ी नारियों के मूल्यबोध, स्वाभिमान और मर्यादा को उजागर करते हुए उन्हे वस्तु के स्थान पर एक व्यक्ति के रुप में प्रस्तुत किया है। इसीलिए तो 'दस द्वार का पिंजरा' की ढेलाबाई जो तमाम आयु वेश्या की जीवन व्यतीत करती है, अपनी नातिन काननबाला से कहती है कि ''औरत की देह मिली है तो क्या, वह रुह का कैदखाना नहीं बनने दी जाएगी। इसे अपना संसार और बड़ा करना होगा।'' तारा और ढेलाबाई दोनों ही अपने जीवन को ग्लानि के गर्त में डुबोने के स्थान पर व्यापक सामाजिक चेतना से जोड़ती है।

अनामिका जी के नारी विमर्श की एक विशेषता यह है कि उनके यहाँ पुरुष के प्रति घृणा नहीं। वह पुरुष के बिना नारी विमर्श को अधूरा मानती है। क्योंकि दोनों ही समाज के आवश्यक अंग है। उनकी नारी मुक्ति की कामना एकांकी नहीं बल्कि सम्पूर्ण समाज की मुक्ति उन्हें अभिप्रेत है, ''मुक्ति भी स्त्री लिंग ही तो है। कभी अकेली नहीं मिलती। हरदम वह झुण्ड में ही हँसती बोलती चलती है।'' इस प्रकार उनके नारी विमर्श का स्वरुप सर्जनात्मक है।

इस तरह हिन्दी साहित्य में नारी चेतना का पहला स्वर जो मीरा में सुनाई देता है वह आज इक्कीसवीं सदी में पहुँच कर अधिक प्रखर एंव प्रौढ़ हो गया है। हिंदी के समकालीन कथा साहित्य में स्त्री के स्व की प्रतिष्ठा स्पष्ट रुप से दृष्टिगोचर हो रही है विशेषतः महिला कथाकारों की रचनाओं में स्त्री स्वतंत्र रुप में अपनी पहचान स्थापित कर रही है। अब तक उसकी भूमिका

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 12
September 2017

समाज द्वारा निर्धारति होती रही है। परन्तु आज वह इस स्थिति से बाहर निकल कर स्वयं अपने निर्णय ले रही है। हिन्दी की उपरोक्त वर्णित महिला कथाकारों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से हाशिये पर धकेली गई इसी नारी को केन्द्र में स्थापित कर उसे वाणी प्रदान की है, इसमें कोई संदेह नहीं है।

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 12
September 2017

संन्दर्भ संकेत

1. प्रभाकर क्षेत्रिय (संपादक), नया ज्ञानोदय, जुलाई 2005, पृ: 49
2. यतीन्द्र तिवारी(संपादक), हिन्दी अनुशीलन, पृ: 102
3. कृष्णा सेबती
   1. डार से बिछुड़ी
   2. ऐलड़की
   3. मित्रो मरजानी
   4. तीन पहाड़
   5. सूरजमुखी अंधेरे में
   6. जिंदगीनामा
   7. दिलोदानिश
   8. समय-सरगम
4. प्रभा खेतान
   1. पीली आँधी
   2. छित्रमस्ता
   3. आओ पेपे घर चलें
5. चित्रा मुद्गल
   1. एक जमीन अपनी
   2. आवाँ
6. अनामिका
   1. तिनका तिनके पास
   2. दस द्वारे का पींजर